मसाला वाटिका

से घरेलू उपचार

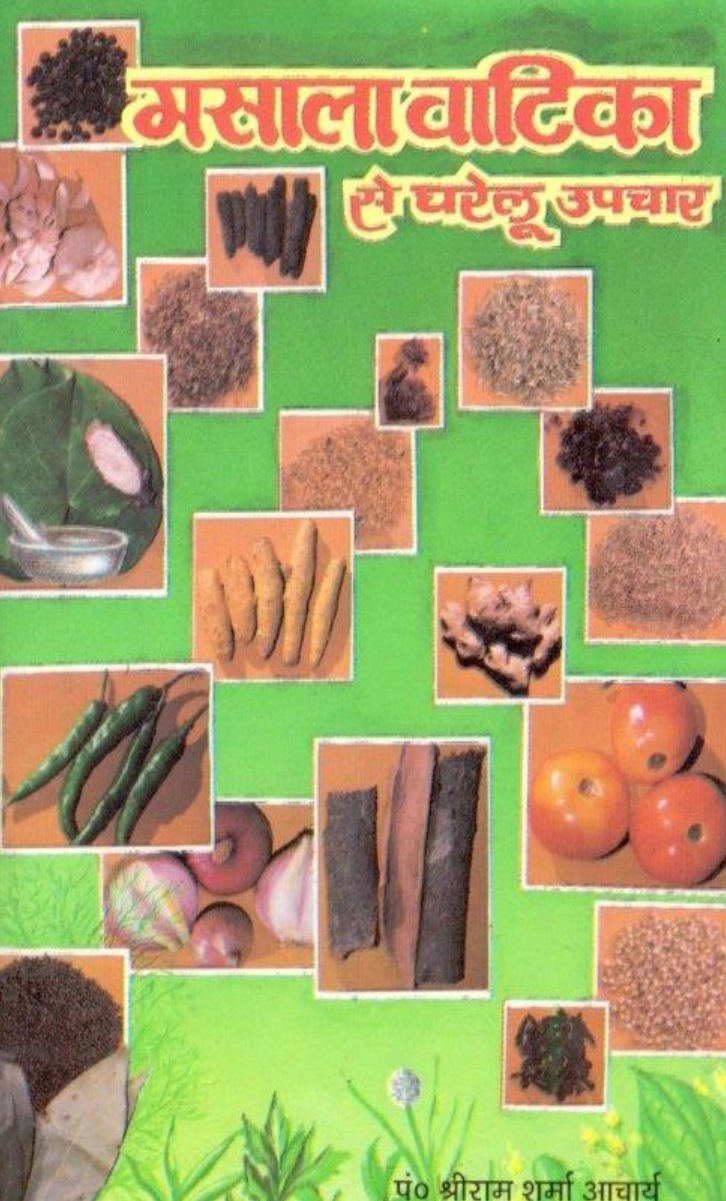

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

मसाला वाटिका से घरेलू उपचार

●

लेखक :

श्रीराम शर्मा आचार्य

●

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् **२०१५**

मूल्य : ६.०० रुपये

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

सभी मसाले औषधियाँ हैं। औषधि की आवश्यकता शारीरिक–मानसिक आधि–व्याधि में ही होती है। नीरोग मनुष्य को मात्र स्वाद के लिए मसालों का नियमित अधिक मात्रा में प्रयोग उचित नहीं है। नित्य प्रति मसालों का सेवन करने वालों को रोग की अवस्था में इनका औषधि के रूप में प्रयोग अभीष्ट लाभ नहीं पहुँचाता। मसालों का औषधि के रूप में सेवन करना ही उचित है। अपनी मसाला वाटिका को घरेलू उपचार के लिए प्रयोग करें।

मुद्रक :

युग निर्माण योजना प्रेस,

गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

मसाला वाटिका से घरेलू उपचार

भोजन के समय दाल, शाक आदि में मिलाए जाने वाले मसालों में से अधिकांश ऐसे होते हैं, जिनमें किसी न किसी रोग के निवारण की क्षमता भी है। कई मसालों को एक साथ मिला देने पर उनसे रुचिकर स्वाद बनता है, पर औषधि की दृष्टि से उस सम्मिश्रण का प्रभाव गुणहीन हो जाता है। ऐसी स्थिति में वह औषधि के स्थान पर प्रयोग करने योग्य भी नहीं रह जाते।

मसालों को सामान्यतया स्वादवर्धक एवं पाचक माना जाता है। उनका आम प्रयोग–प्रचलन इसी रूप में है, पर उन्हें निरापद घरेलू चिकित्सा के रूप में भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

अच्छा हो अपने घर–आँगन में या जहाँ भी उपयुक्त जगह हो, एक–दो क्यारी मसालों, औषधियों को बो लिया जाए। वे हर ऋतु में बने रह सकते हैं। खाद–पानी, धूप–हवा का ध्यान रखा जाए, तो मसालों को हर मौसम में उपजाया जा सकता है। कुछ महीने सभी हरीतिमाओं के लिए अनुकूल पड़ते हैं और कुछ सामान्य। यह स्थानीय भूमि एवं वातावरण पर भी बहुत कुछ निर्भर है। इसकी जानकारी पास–पड़ौस वालों अथवा सब्जी उगाने वालों से पूछ कर एकत्रित कर लेनी चाहिए। अधिक मात्रा में उगाने और अच्छी फसल लेने के लिए यह जानकारी विशेष काम आती है अन्यथा साज–संभाल रखने पर मसालों के पौधे हर महीने बोए और काम में लाए जा सकते हैं।

मसालों में हल्दी, सौंफ, धनिया, अजवाइन, राई, अदरक (सोंठ) जैसी वस्तुएँ भोजन में अतिरिक्त रूप से मिलाई जाती हैं। नमक, मिर्च तो नित्य ही प्रयुक्त होते हैं। इसीलिए उनका अतिरिक्त गुण देखने को नहीं मिलता। नशेबाज रोज तम्बाकू आदि पीते रहते हैं, फिर वह उनकी आदत में शुमार हो जाता है। छोटे बच्चों को मिर्च खिलाई जाए तो, वह रोने लगेगा। इसी प्रकार नमक की अधिक मात्रा भी असह्य

होती है, किंतु एक बार उसका अभ्यास पड़ने पर कोई विशेष प्रतिकूल परिणाम तत्काल नहीं होता। यहाँ 'अति' की चर्चा करना जरूरी है। 'अति' से जन्म लेने वाले कष्ट एवं रोग जब पथ्य की माँग करते हैं, तब मसालों की महत्ता मालूम पड़ती है। नमक या मिर्च का हृदयाघात, अपच, पेप्टिक–अल्सर, गुर्दे की बीमारियों में जब निषेध कर दिया जाता है, तब अनुभव होता है, कि वे किस प्रकार दैनन्दिनचर्या का एक अंग बन गए थे। अति से हर औषधि विष बन जाती है। मसाले भी अपवाद नहीं है। बाजार में पुराने, घुन लगे, अशुद्ध सूखे मसाले लेने से अच्छा यही है कि उन्हें ताजा घर में ही उगा लिया जाए। अपवाद रूप में कुछ ही ऐसे हैं, जो ताजे प्राप्त नहीं किए जा सकते–खनिज या अन्य स्रोतों से उपलब्ध होते हैं। घरेलू शाक–वाटिका जिस प्रकार आँगन में, छत पर, छप्पर पर गमलों, पेटियों और घड़ों के टूटे पेदों में, टूटी टोकरियों या कनस्तरों में लगाकर खड़ी कर ली जाती है, उसी प्रकार मसाले बनाने के लिए भी घरों में या उनके आस–पास ही जगह तलाश की जा सकती है। जमीन का बड़ा टुकड़ा उपलब्ध हो, तो उन्हें अलग–अलग छोटे–छोटे टुकड़ों में बोया जा सकता है।

हर मसाले में भी कितने ही विटामिन, खनिज तथा दूसरे उपयोगी रासायनिक तत्त्व होते हैं। इसलिए उनमें से जो रुचिकर हों, उनका चयन कर चटनी बनाई जा सकती है, उसे भोजन के साथ खाया जा सकता है। यह तो हुई रसोई को स्वादिष्ट या गुणकारी बनाने की विधा, पर समय–कुसमय, यदि कोई रोग–विकार उठ खड़ा हो तो उसकी प्राथमिक चिकित्सा हेतु इन मसालों में से जो उपयुक्त हों, उन्हें चुनकर प्रयोग में लाया जा सकता है। इस प्रकार एक ही कार्य से कई प्रयोजन सधते हैं। भोजन का स्वादिष्ट होना, उसमें कुपोषण निवारक गुणकारी तत्त्वों का समावेश होना, घर में सुगंधित वातावरण रहने से चित्त प्रसन्न रहना और कृमि–कीटकों का सहज पलायन होते रहना। इन गुणों को देखते हुए इस निष्कर्ष

पर सहज ही पहुँचा जा सकता है कि घरेलू शाक वाटिका आंदोलन की तरह छोटी मसाला बाड़ियाँ भी घरों में उगाई जानी चाहिए। साथ ही यह अनुभव भी होना चाहिए कि कौन मसाला वनस्पति किस रोग में काम आ सकती है और उसकी मात्रा कितनी होनी चाहिए। यों तो ये भारतीय परिवार संस्था पद्धति में घरेलू नुस्खों के रूप में चिर प्रचलित औषधियाँ हैं, फिर भी मात्रा एवं प्रयोग की शास्त्रोक्त–विज्ञान सम्मत जानकारी हर दृष्टि से उपयोगी है।

अनुमान के लिए जो मिश्रण परस्पर किया गया है, उसकी बात अलग है, पर चिकित्सा प्रयोजन में कई मसाले एक साथ न मिलना अधिक अच्छा है। एक ही वस्तु का प्रयोग करने से वह अपना पूरा गुण दिखा पाती है। मिश्रण करने से कई गुण एक साथ मिल जाने पर घपला हो जाता है। एक पदार्थ उसके गुण बढ़ा भी सकता है और ऐसा भी हो सकता है कि कोई तीसरा प्रभाव उत्पन्न हो जाए। लाल, पीला, नीला रंग न्यूनाधिक मात्रा में मिलने पर अनेक प्रकार के नए रंग बन जाते हैं। यही बात एलोपैथी की औषधियों पर भी लागू होती है। यही वनस्पतियों के बारे में भी है कि उन्हें मिला देने पर वे अपने मूलभूत गुणों से वंचित हो जाएँ और कोई अन्य प्रकार का ऐसा गुण उत्पन्न कर लें, जो इच्छित प्रयोजन पूरा न करके कुछ अन्य ही प्रकार का नया अवसर उत्पन्न कर दे। इसलिए चिकित्सा प्रयोजन में यह ध्यान रखा जाए कि एक बार में एक ही वनस्पति का प्रयोग हो। चटनी की बात दूसरी है। उसमें स्वादों की विविधता से उत्पन्न एक नए जायके का रसास्वादन करने की बात बनती है, पर चिकित्सा प्रयोजन में ऐसा करना उपयुक्त नहीं होगा।

मसाले स्वयं उगाएँ–मसाले आम तौर से बाजार से खरीदे जाते हैं। पीसने के झंझट से बचने के लिए उन्हें आमतौर से पिसी हुई शक्ल में खरीदा जाता है। साबूत या पिसी हुई दोनों ही स्थितियों में इनमें मिलावट की जाती है। चालाक दुकानदार इस व्यवसाय में अच्छा–खासा मुनाफा कमाते हैं और ऐसी चीजें मिला देते हैं, जो

देखने में तो पकड़ में नहीं आती, पर खाने के उपरांत स्वास्थ्य को भारी हानि पहुँचाती हैं। इनका परीक्षण बहुमूल्य मशीनों व सुयोग्य विशेषज्ञों द्वारा ही संभव होता है, जिसकी व्यवस्था हर किसी के लिए संभव नहीं।

जिस प्रकार हर खाद्य पदार्थ की शुद्धता आवश्यक है, उसी प्रकार यह भी आवश्यक है कि मसालों पर और भी अधिक कड़ी नजर रखी जाए, क्योंकि वे अधिक प्रभावी तथा अधिक संवेदनशील होते हैं। इसीलिए बोलचाल में इन्हें गरम मसाला कहा जाता है। इसके साथ मिलावटें प्राय: बाजारों में की जाती हैं। वे ऐसी होती हैं, जिनमें पैसा भी जाता है और विषैला प्रभाव भी गले बँधता है। अस्तु उचित है कि मसालों को, मेहनत बचाने के लिए पिसा हुआ लेने के बजाय, न केवल घर पर पीसा जाए, बल्कि उगाया भी जाए अन्यथा राई के साथ कटेरी के बीज, जीरे के साथ बुहारी कचरा, धनिया के साथ चावल का छिलका जैसी वस्तुएँ मिली रहने की जोखिम बनी रहती है।

मसाले अपनी देख–रेख में उगाए जाने पर ही उनकी शुद्धता, प्रामाणिकता पर विश्वास किया जा सकता है। विशेषतया तब, जबकि उनका उपयोग चिकित्सा प्रयोजनों में भी किया जाता है।

आयुर्वेद के ग्रंथों पर दृष्टि डालते हैं, तो हम पाते हैं कि मसाले के रूप में प्रचलित औषधि, बहु गुणकारी, भूख बढ़ाने वाली एवं अनेक रोगों को नाश करने वाली हैं। दैनन्दिन जीवन में प्रयुक्त होने के कारण हम दुर्भाग्यवश उनका महत्व नहीं जान पाते, पर गहराई से विवेचन करें, तो हम पाते हैं कि भारतीय भोजन पद्धति कितनी दूरगामी नीतियों को सामने रखकर ऋषि–मनीषियों द्वारा निर्धारित की गई थी।

मसाला औषधि वाटिका में प्रयुक्त की जा सकने वाली औषधियाँ इस प्रकार है–(१) राई, (२) हल्दी, (३) अदरक, (४) सौंफ, (५) मेथी, (६) जीरा, (७) मिर्च, (८) पुदीना, (९) पिप्पली, (१०) गिलोय,

(११) तुलसी, (१२) अजवाइन, (१३) धनिया, (१४) लहसुन, (१५) ग्वारपाठा, (१६) प्याज, (१७) आँवला।

अन्य औषधि मसाले–(१८) सुहागा, (१९) हींग, (२०) काला नमक, (२१) लौंग, (२२) तेजपत्रक, (२३) दालचीनी।

अंतिम ६ ऐसी हैं, जो घर में नहीं उगाई जा सकती। काला नमक और सुहागा खनिजों से प्राप्त होते हैं, पर इनका प्रचलन मसालेदान में बहुधा होता है, अतः उनकी उपयोगिता को जानते हुए शुद्ध रूप में औषधि प्रयोजन हेतु घर में रखना चाहिए।

इन सब का विभिन्न रोगों में प्रयोग गुण–धर्म, लगाने या प्राप्ति की विधि, मात्रा एवं अनुपान का संक्षिप्त वर्णन यहाँ प्रस्तुत है।

(१) **राई**–सरसों की बिरादरी में ही इसकी गणना होती है। इसका दाना छोटा और काला होता है। तेल भी कम निकलता है, इसलिए तिलहन विक्रताओं के यहाँ यह नहीं मिलती। उसे पंसारी ही बेचते हैं, क्योंकि उनका प्रमुख उपयोग मसाले की तरह होता है। इसकी दाल पीस ली जाए, फिर पानी में डाला जाए, तो पानी खट्टा हो जाता है। कांजी–बड़े मूँग–उड़द दाल से बनते हैं, पर उन्हें राई के पानी में फुलाया और साथ–साथ खाया जाता है।

राई का प्रमुख गुण पाचक है। खटाई पैदा करने का गुण होने से वह स्वादिष्ट भी है। पेट में नन्हें कीड़े पड़ जाने पर इसके पानी से कीड़े मर जाते हैं। हैजे में राई पीस कर पेट पर लेप करने से उदरशूल व मरोड़ में आराम मिलता है। सभी अचारों में राई डाली जाती है। उससे वे सड़ते भी नहीं और खटाई लिए हुए अपना स्वाद भी बनाए रहते हैं। इसी प्रकार दाल–शाक में अन्य मसालों के साथ इसका भी उपयोग होता है।

दर्द या सूजन मिटाने का उसमें गुण है। इसकी पुल्टिस बनाकर यदि दर्द वाली जगह में सेक किया जाए, तो तुरंत राहत मिलती है। बाह्योपचार में राई का लेप सूजन कम करने वाला माना जाता है। गरम पानी में राई डालकर सहने योग्य तापमान तक बना लिया जाए,

इतने में राई फूल जाती है और पानी में उसका असर हो जाता है। इस पानी को किसी टब में कमर की ऊँचाई तक भरा जाए और उसमें टबबाथ की तरह बैठा जाए तो प्रदर, प्रमेह आदि यौन रोगों के सुधार में इसका बहुत अच्छा प्रतिफल निकलता है।

राई या सरसों के तेल, में बारीक नमक मिलाकर, उससे मंजन का काम लिया जाए, तो दाँतों तथा मसूढ़ों की मजबूती व सफाई होती रहती है।

विष विकार में चूर्ण एक से दो चम्मच की मात्रा में दिया जाता है, ताकि वमन के द्वारा विष बाहर निकल जाए। राई का औषध प्रयोजन हेतु कम मात्रा में उपयोग ही लाभकारी है। इसे पीसकर शहद में मिलाकर सूँघने से जुकाम मिटता है। मात्र राई पीस कर सूँघने या तेल सूँघने से मिर्गी–मूर्छा दूर होती है। कान के फोड़े फुन्सी व बहरेपन में राई का तेल कान में डालते हैं। राई पीस कर अरण्डी के पत्तों में चुपड़ कर जोड़ों पर लगाने से संधियों की सूजन मिटती है।

राई अग्निदीपक, पाचक, उत्तेजक एवं पसीना लाने वाली बड़ी गुणकारी औषधि है।

(२) **हल्दी**–इसका आकार भी अदरक जैसा होता है। पौधे की एक–एक फुट की चौड़ी पत्तियाँ होती हैं। पीले रंग के फूल वर्षा के दिनों में बड़े सुहावने लगते हैं। हल्दी के चूर्ण का उबटन किया जाता है। दाल शाक को पीला रंग देने के लिए हल्दी डालना शोभा भी बढ़ाता है, सुगंध भी देता है और गुणकारी भी होता है। खाज, खुजली, फुन्सी आदि में उसका सेवन उपयोगी रहता है। गहरी चोट लग जाने पर हल्दी का चूर्ण दूध के साथ पिलाते हैं। अलसी तेल, नमक और हल्दी की पुल्टिस बनाकर सूजन, दर्द एवं चोट वाले स्थानों की सिकाई की जाती है। हल्दी रक्त शोधक भी है। शरीर पर फुन्सियाँ उठने, चकत्ते जैसी पित्ती उछलने में हल्दी को शहद के साथ मिलाकर चाटते रहने की प्रथा है। पेट में कृमि पड़ने पर हल्दी का क्वाथ बनाकर पिलाया जाता है। खाँसी आने पर हल्दी के टुकड़े

मुँह में पड़े रहने दिए जाएँ और उन्हें धीरे–धीरे चूसते रहा जाए, तो लाभ होता है। जुकाम, सर्दी, सिर दर्द में गर्म दूध के साथ उसके उपयोग से बहुत लाभ होता है।

आयुर्वेद के अनुसार हल्दी उष्ण, सौंदर्य बढ़ाने वाली, रक्तशोधक, कफ–वात नाशक, पित्त शामक एवं लीवर के लिए उत्तेजक मानी गई है। सर्दी लगने पर हल्दी की धूनी दी जाती है। सिरदर्द व साइनुसाइटिस में हल्दी गुनगुने जल के साथ लेने से बलगम निकलता व सिर हल्का होता है। मूत्र रोगों में इसका काढ़ा बहुत आराम देता है। आँखों के दुखने पर एक तोला हल्दी, एक पाव पानी में औटाकर, कपड़े से छानकर आँखों में टपकाते हैं, तो लाली जल्दी मिटती है। प्रमेह में हल्दी के चूर्ण को आँवले के रस के साथ देते हैं। इसकी प्रयोग मात्रा किसी भी रोग में दो माशे से अधिक नहीं होनी चाहिए। अनुपान प्रायः गुनगुना जल, दूध या मधु होता है।

बाजारू हल्दी में ऊपर से नकली रंग पोता जाता है, ताकि ग्राहक को आकर्षक लगे, पर यह रंग हानिकारक पाए गए हैं। इसलिए बिना रंग की हुई हल्दी प्राकृतिक रूप में लेनी चाहिए। पिसी हल्दी में पीली मिट्टी मिलाकर उसका वजन भारी कर दिया जाता है। इस प्रकार के मिश्रण खाने वाले को अनेक प्रकार की हानियाँ पहुँचती हैं। इसलिए घर पर उगाई और पीसी गई हल्दी का उपयोग ही उचित है।

(३) **अदरक**–अदरक गीली गाँठ है, जो जमीकन्द की तरह जमीन में गढ़ी–गढ़ी बढ़ती रहती है। उसमें से जितनी आवश्यकता है, काटकर शेष भाग को फिर जमीन में गाड़ा और भविष्य के लिए बढ़ते रहने दिया जाता है। यही अदरक जब सुखा लिया जाता है, तब सोंठ बन जाता है। बोने के लिए इसके टुकड़े काट–काट कर ही गाढ़ दिए जाते हैं। इसमें बीज नहीं होता।

अदरक पाचक है। पेट में कब्ज, गैस बनना, वमन, खाँसी, कफ, जुकाम आदि में इसे काम में लाया जाता है। नमक मिली चटनी

बनाकर चाटते रहने, बारीक न पीस सके, तो टुकड़े मुँह में डालकर चूसते रहने से लाभ होता है। बच्चों के लिए रस के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। अदरक का रस और शहद मिलाकर चाटते रहने से दमा, श्वाँस, खाँसी से लेकर क्षय रोग तक में सुधार होता है। हिचकी, जमुहाई का अनुपात बढ़ जाए, तो भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। दाढ़ के दर्द में भी इसका सेवन उपयोगी है।

अदरक और सोंठ के गुण एक जैसे होते हैं, पर जब चूर्ण में उसका प्रयोग करना हो, तो सोंठ लेना ही उपयुक्त है। उसमें अदरक की तरह बार–बार पीसने का झंझट नहीं रहता।

अदरक भोजन के कुछ पूर्व लेने से अग्नि प्रदीप्त करती है, भूख बढ़ाती है। इसमें दोनों गुण हैं, आँतों की प्रवाही स्थिति में ग्राही भी है एवं कब्जियत को भेदने का गुण भी इसमें है। यह आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध योग त्रिकुटा (सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली) का एक प्रधान अंग है। अदरक का ताजा रस मूत्र निस्तारक (डायुरेटिक) औषधि माना गया है।

विषम ज्वर में गो दुग्ध के साथ डेढ़ माशे की मात्रा में, हृदय रोग में कुनकुने क्वाथ के रूप में, हिचकी में आँवला व पीपल का चूर्ण शहद के साथ, पक्षाघात में सेंधा नमक के साथ महीन पीस कर सुँघाने के रूप में, अजीर्ण में धनिए के साथ क्वाथ बनाकर, संग्रहणी (डिसेन्ट्री) में कच्चे बेल का गूदा, अदरक एवं गुड़ मिलाकर मट्ठे के साथ पीने से तथा सोंठ और गोखरू का क्वाथ प्रातः पीने से पीठ व कमर के दर्द में आराम पहुँचता है।

(४) सौंफ–सौंफ शीतल प्रकृति की औषधि है। उसके फल जीरे से मिलते जुलते हैं। उन्हीं को काम में लाया जाता है। पान, सुपारी, इलायची की जगह सौंफ को अतिथि सत्कार के लिए प्रयुक्त किया जाना चाहिए। गर्मी के दिनों में ठंडाई पीने का प्रचलन है। उसमें सौंफ प्रमुख है। उसकी मात्रा भी अधिक रखी जाती है। स्वाद में मीठी और सुगंधित होने के कारण वह सर्वप्रिय भी है, सस्ती भी।

जिन रोगों में गर्मी की अधिकता का प्रभाव दृष्टिगोचर होता हो, उनमें सौंफ का प्रयोग बेखटके किया जाता है। डंठलों के तिनके जैसे प्रायः जुड़े रहते हैं, उन्हें हटाने के लिए उनकी धुलाई–मजाई की जा सकती है। हथेलियों से भी रगड़ा जा सकता है। तवे पर हल्की आग से भून लेने पर भी जुड़े हुए तिनके अलग हो जाते हैं। इतना कर लेने पर सौंफ का उपयोग थोड़ी–थोड़ी मात्रा में मुँह में डालते हुए पान की तरह चबाकर किया जा सकता है। सिल पर चटनी की तरह बारीक पीसकर शहद या चीनी के साथ मिलाकर चाटा जा सकता है। सौंफ को बारीक कूटकर उसे पानी में भिगोया जाए, ऊपर से पानी निथारते रहा जाए। पानी सुखाकर अंत में जो गाढ़ा सा तलछट बच जाए, उसे सुखा लिया जाए, यही सौंफ का सत है। इसी प्रकार गिलोय आदि का भी सत निकालते हैं, सत्व को हमेशा कम मात्रा में लेते हैं।

आयुर्वेदिक मत से सौंफ चरपरी अग्निप्रदीपक, वात, ज्वर एवं शूलनाशक तथा तृष्णा, वमन को शांत कर देने वाली औषधि है। यह पेशाब की जलन कम करती है। यह आँतों की मरोड़ शांत करती है एवं श्रेष्ठ अम्ल, पित्त नाशक है। सौंफ को घी में तला जाए व मिश्री के साथ मिलाकर लिया जाए, तो अतिसार (डायरिया) मिटता है। बेल के गूदे के साथ चूर्ण खाने से अजीर्ण मिटता है। सौंफ के बीज, गुलाब के फूल, कमल गट्टे की मगज, चंदन चूर्ण, खस, काली–मिर्च, छोटी इलायची, खरबूजे का बीज व बादाम आदि में से जो उपलब्ध हो, उन्हें मिलाकर पीसकर ठंडाई बनाई जाती है, जो मेधावर्धक भी है एवं लू, पित्त, ज्वर, हैजा, दस्त दमन की श्रेष्ठ औषधि भी।

(५) मेथी–मेथी के पत्ते का तो अच्छा शाक या सूखी भुजिया बनती है, किंतु उसके बीज मसाले के काम आते हैं। भिगोने से वे फूल जाते हैं। छिलका उतारने पर कड़वाहट तो कम हो जाती है, किंतु साथ ही गुण भी कम हो जाते हैं। इतने पर भी उसका गर्मी

प्रधान गुण छिलके सहित या छिलके रहित स्थिति में अपना काम करता है । मेथी के बीजों की पतली दाल, तली हुई भुजिया बन सकती है। घी शक्कर के साथ उसके लड्डू भी बन सकते हैं। औषधि प्रयोग में उसके बीजों का चूर्ण काम में लिया जा सकता है। ऐसा भी हो सकता है कि उबाल–छानकर उसके पानी को गुनगुनी स्थिति में पिया जाए।

मेथी गठिया जैसे रोगों में विशेष रूप से काम आती है। जकड़न, सूजन में भी उससे लाभ होता है। जुकाम–सर्दी के अतिरिक्त बहुमूत्र जैसे रोगों पर भी उससे अंकुश लगता है, भूख खुलती है और अपच दूर होता है। मेथी में जनवरी–मार्च में पुष्प फल लगते हैं। छोटी मेथी का उपयोग ही शाक–सब्जी में होता है।

मेथी आयुर्वेद के मतानुसार मूलतः वात नाशक है। नाड़ियों की दुर्बलता में भी इसका प्रयोग करते हैं। प्रसव के बाद स्तनों से दूध आने व हारमोन्स की नियमितता के लिए मेथी मोदक खिलाने का प्रावधान भारतीय परिवारों में है। दुर्बलता, शरीर में पीड़ा, थकान में यह टॉनिक का काम करती है। मेथी का पंचाग भी प्रयुक्त होता है एवं बीज चूर्ण भी। १ से ३ ग्राम की मात्रा में बीजों से सब्जियों में छौंक देते हैं। मेथी–दाने की सब्जी को लोग बड़े शौक से खाते हैं।

(६) **जीरा**–जीरा पाचक और सुगंधित है। अरुचि, पेट फूलना, अपच आदि को दूर करने में उसका अच्छा प्रभाव देखा गया है। भुने हुए जीरे की सुगंध सूँघते रहने से जुकाम की छीकें आना बंद होता है। रुका हुआ जुकाम खुल जाता है। प्रसूति के उपरांत सेवन करने से गर्भाशय का कचरा साफ हो जाता है। साथ ही स्तनों में दूध भी बड़ी मात्रा में उतरता है।

मुखमार्जन में जीरे का अपना उपयोग है। भुना जीरा भोजन के उपरांत थोड़ी मात्रा में मुँह में डाल लिया जाए, तो पाचक स्राव बहना आरंभ हो जाते हैं और भोजन के समय की गई जल्दबाजी से भोजन में मुख स्रावों की कमी रह जाती है, उसकी पूर्ति होती है। जीरे

की प्रकृति गरम है, इसलिए उसे गरम मसालों में प्रयुक्त किया जाता है। जीरा वमन ला सकता है और पतले दस्त में गाढ़ापन आ जाता है।

आयुर्वेदिक मतानुसार जीरा गरम, रुचि बढ़ाने वाला, अग्निदीपक, विषनाशक एवं पेट के अफारे को दूर करने वाला है। जठराग्नि को प्रदीप्त करने के अलावा यह कृमि नाशक है एवं ज्वर निवारक भी। जीर्ण ज्वर में यह लाभ देता है। जीरे को उबाल कर उस पानी में स्नान करने से खुजली मिटती है। बवासीर में इसे मिश्री के साथ मुखमार्ग से देने व पानी के साथ पीसकर मस्सों में लेप करने से शांति मिलती है। पथरी व जननेन्द्रिय के रोगों में भी उसका मिश्री की चासनी के साथ सेवन किया जाता है। जीरे व नमक को पीसकर घी व शहद में मिलाकर थोड़ा गरम करके बिच्छू के डंक पर लगाने से विष उतर जाता है। जीरे का चूर्ण दही में मिलाकर खिलाने से अतिसार मिटता है। प्रयोग हेतु मात्रा, बीज चूर्ण ४ से ६ ग्राम तक की है। अनुपान मिश्री, गुड़ या मधु रोगों के अनुरूप निर्धारित किया जाता है।

(७) मिर्च–मिर्चों की दो जातियाँ प्रधान रूप से पाई जाती हैं। एक काली मिर्च, दूसरी हरी मिर्च। हरी मिर्च पक जाने पर पौधे पर ही लाल हो जाती हैं और सुखाने पर तो उसका रंग लाल हो ही जाता है।

काली मिर्च मँहगी भी है और उसे हर जगह उगाया नहीं जा सकता। उसके लिए उपयुक्त मौसम और फसल होनी चाहिए। इसलिए इतने झंझट में न पड़कर जिन्हें जरूरत पड़ती है, वे बाजार से ही खरीद लेते हैं।

गरम मसाले का दाल–शाकों में ऊपर से बुरकने का भी रिवाज है। उसमें लौंग, काली मिर्च, पीपल, तेजपात्र, दालचीनी, हींग, धनिया, जीरा आदि का प्रयोग होता है, पर उनके उगाने में बहुत झंझट है। इसलिए उन्हें भी किसी प्रामाणिक दुकान से खरीद

कर आवश्यकतानुसार काम चलाना चाहिए। इनकी प्रयोग विधि का वर्णन भी आगे किया गया है।

सुलभ उत्पादन में हरी मिर्च काम आती है। वह भी मध्यम स्तर की ही होनी चाहिए। एक छोटे आकार की मिर्च अत्यंत कड़वी होती है। एक छोटे बैंगन या करेले के आकार की होती है, उसे शाक की तरह प्रयुक्त किया जाता है। औषधि वर्ग में तो मध्यवर्ती हरी मिर्च ही काम में लाई जाती है।

मिर्च का स्वाद चटपटा और गुण दाहकारक है। जलन उत्पन्न करने के लिए जहाँ भी उसकी आवश्यकता समझी जाती है, वहाँ प्रयोग कर लिया जाता है। छोटी–छोटी फुन्सियाँ उठने पर उन पर लेप देने से वे जल जाती हैं। खाज, खुजली के लिए मिर्च को तेल में जलाकर उसकी मालिश की जाती है। जोड़ों के दर्द में भी उसकी मालिश की जाती है। कुत्ते के काट लेने या बर्र, ततैया आदि के डंक मार देने पर मिर्च पीस कर लगा देने से वह स्थान झुलस जाता है और विषैले असर से छुटकारा मिल जाता है। मकड़ी कुचल जाने पर भी चमड़ी पर मवाद वाले छोटे दाने उठ जाते हैं, उन पर भी मिर्च पीसकर लगाने से काम चल जाता है।

हरी मिर्च कम मात्रा में ली जानी चाहिए। वैसे कम मात्रा में यह अग्नि दीपक है, इसलिए छौंक आदि में इसका प्रयोग घरों में होता है। थोड़ी मात्रा में बढ़ने पर वह अम्ल पित्त का कारण बन जाती है।

(८) **पुदीना**–पुदीने का स्वाद और सुगंध प्रसिद्ध है। वह घास की तरह किसी भी क्यारी में उपजाया जा सकता है। कुछ महीनों को छोड़कर वह सदा हरा रहता है। उसमें एक विशिष्ट गंध आती है, जो इसके तैलीय सत्व के कारण होती है, जिससे पिपरमेन्ट बनती है। पुदीना का रायता, पुदीने की चटनी का प्रचलन प्रसिद्ध है।

पुदीने का गुण शीतल है। उसे लू लगने, सिर दर्द होने जैसी परिस्थितियों में ठंडाई की तरह बनाकर पिया जा सकता है। मुँह के छाले या मसूड़े के दर्द में उसे गरम पानी में मिलाकर कुल्ले करने से

आराम मिलता है। यह मुख दुर्गन्ध नाशक भी है। जिन दिनों हरा पुदीना नहीं मिलता, उन दिनों सूखे पत्ते या डंठल भी लाभ दे जाते हैं।

चूर्ण–चटनी बनाने वाले पुदीने की प्रधानता रखते हैं। चासनी के सहारे उसका शरबत भी बनाया जा सकता है और गर्मी के दिनों में जलपान–आतिथ्य की तरह काम में लाया जा सकता है।

पुदीना हैजे की दवा है। अर्क पुदीना के रूप में इसका उपयोग, जी मचलाना, अफारा, अतिसार, बवासीर आदि में होता है। शरीर को सुगठित बनाने के लिए उसका लेप या उबटन भी किया जा सकता है।

हृदय की दुर्बलता, लो ब्लडप्रेशर में उपयोगी है। हिचकी एवं श्वांस रोगों में भी इसे प्रयुक्त करते हैं। ज्वर तथा उसके बाद दुर्बलता में भी इसे प्रयुक्त करते हैं। पत्रों का ताजा स्वरस ५ से १० मिली लीटर (१ से २ चम्मच, फाण्ट ४ से ८ चम्मच व तैल १ से ३ बूँद की मात्रा में प्रयुक्त करते हैं।)

(९) **पिप्पली**–छोटी पिप्पली, बड़ी पिप्पली इन दो किस्मों में यह काम में लाई जाती है। घरेलू प्रयोजन हेतु गरम मसालों में, औषधि उपचार में छोटी पिप्पली, पीपर या लैंडी पीपल का ही उपयोग है। इसकी लता फैलती है और वर्षों तक रहती है। फल छोटे शहतूत की शक्ल का होता है। इसी का प्रयोग किया जाता है। सूखने पर फल काले हो जाते हैं। वर्षा में फूल और शरद ऋतु में फल आते हैं। इसकी जड़ में भी फल जैसे गुण होते हैं। उसे पीपलमूल कहते हैं। इसकी बेल को किसी आधार के सहारे बढ़ाया जाता है। जमीन पर फैलने में कठिनाई है।

पिप्पली पौष्टिक है और पाचक भी। प्रातः दूध और शहद के साथ लें, तो बलवर्धक है। बच्चों की पसली चलने पर भुनी पीपल का जरा सा चूर्ण शहद में मिलाकर खिलाया और लगाया भी जा सकता है।

जिगर बढ़ना, तिल्ली बढ़ना, अफारा, अपच, वमन, अजीर्ण

आदि में तथा श्वांस, खाँसी में भी लाभदायक है। जुकाम, आधा सीसी में भी इसे विया जा सकता है। ज्वर, राजयक्ष्मा में भी लाभदायक है। वायु गोला, हिस्टीरिया में भी इसका उपयोग लाभदायक होता है। अतिसार, संग्रहणी, बवासीर में भी पिप्पली का उपयोग किया जा सकता है।

आयुर्वेद के मतानुसार पिप्पली अग्निदीपक, बलवर्धक, रसायन, उष्ण, चरपरी, वात–कफनाशक मानी गई है। पिप्पली, सौंठ, कालीमिर्च के साथ "त्रिकुटा" का महत्त्वपूर्ण घटक है। सौंठ के चूर्ण व गुड़ के साथ इसे लेने पर आमशूल, अजीर्ण और सूजन दूर होती है। पिप्पली को नीम के रस में उबालकर नासिका मार्ग से देने पर अपस्मार रोग में लाभ होता है। इसके काढ़े में शहद मिलाकर पीने से जीर्ण वात–कफजन्य ज्वर दूर होता है। पिप्पली की प्रमुख क्रिया फेफड़ों व गर्भाशय पर होती मानी गई है। फेफड़ों के व्रण, पुरानी खाँसी, तपेदिक में यह बहुत लाभकारी है। प्रसूति में देरी हो रही हो (यूटेराइन इनर्शिया) तो पीपला मूल, चित्रक मूल व हींग को पान में रखकर देने से प्रसूति क्रिया तुरंत संपन्न होने लगती है। मलेरिया ज्वर यकृत–प्लीहा वृद्धि को यह मिटाती है। पक्षाघात एवं सायटिका रोग में भी यह लाभकारी है। पेट के सभी प्रकार के कृमि इसके सेवन से मर जाते हैं। मिश्री के साथ इसका एक ग्राम की मात्रा में सेवन हिचकी मिटाता है। पिप्पली व बच का चूर्ण सम मात्रा में जल के साथ लिया जाए, तो आधा सीसी का दर्द मिटता है। रसायन प्रयोजन हेतु वर्धमान पिप्पली का प्रयोग होता है, जिसमें दस दिन तक क्रमशः ३–३ फल बढ़ाते व बाद में कम करते हुए इसका प्रयोग किया जाता है। चूर्ण की मात्रा एक ग्राम से अधिक नहीं की जानी चाहिए। मधु, मिश्री एवं गुड़ श्रेष्ठ अनुपान है।

(१०) गिलोय (अमृता)–यह बेल पेड़ पर चढ़ाई जाती है और चिरकाल तक स्थिर रहती है। इसके लिए बड़े पेड़ का आश्रय चाहिए। नीम पर चढ़ाई जा सके तो सर्वोत्तम है। गिलोय के डंठल

काम में आते हैं। कोपलें भी प्रभावशाली होती हैं। जितना टुकड़ा आवश्यक हो, उसे ऊपर से काटना चाहिए। नीचे तने की ओर से काट लेने पर तो ऊपर का सारा भाग सूख जाता है।

गिलोय को पानी में पीसकर ठंडाई जैसी बना लेनी चाहिए। यों उसे पंसारी सुखाकर भी टुकड़ों में बेचते हैं। गिलोय का सत भी निकालते हैं, पर अधिक अच्छा यही है कि उसे गीली स्थिति में ही लिया जाए, चटनी या ठंडाई के रूप में ही प्रयुक्त किया जाए। उसे एक बार या आवश्यकतानुसार प्रातः सायं दो बार भी लिया जा सकता है।

गिलोय को रामबाण स्तर की संजीवनी बूटी माना गया है। इसके गुण प्रायः तुलसी से ही मिलते–जुलते हैं। यह पुराने ज्वरों को तोड़ती है। राजयक्ष्मा को जड़ से उखाड़ती है। रक्तचाप, हृदय रोग एवं मधुमेह के लिए असाधारण सिद्ध होती है। गिलोय बलवर्धक है। वह प्रमेह, स्वप्नदोष व नपुंसकता आदि में भी अपना प्रभाव प्रस्तुत करती है। यह हानि रहित औषधि है।

गिलोय घी के साथ वात को, शक्कर के साथ पित्त को, शहद के साथ कफ को एवं सोंठ के साथ आमवात को दूर करती है। इसका ज्वर शामक गुण किसी भी एण्टीबायोटिक से कई गुना बढ़कर है। तुलसी और बनफसा के साथ इसको मिलाकर लेने पर जीर्ण ज्वर में तुरंत लाभ होता है। जलोदर (ऐसाइटिस), कामला, पीलिया में यह चमत्कारी लाभ पहुँचाती है। क्षय रोग में ढाई तोला गिलोय का रस छोटी पिप्पली के एक ग्राम चूर्ण के साथ प्रातःकाल पिलाया जाता है। सर्प विष में इसकी जड़ का रस या काढ़ा काटे हुए स्थान पर लगाया जाता है, आँखों में डाला जाता है एवं आधे–आधे घंटे में पिलाया जाता है। गिलोय एक मेधा–वर्धक औषधि है, मस्तिष्क विकारों में बड़ी उपयोगी है एवं एक रसायन है। हरी स्थिति में गिलोय की मात्रा १० से २५ ग्राम व सूखी गिलोय की मात्रा ४ से ६ ग्राम। सत्व की मात्रा आधे से दो ग्राम तक मानी गई है। सर्वश्रेष्ठ अनुपान मधु है।

(११) **तुलसी**–सब रोगों की एक ही औषधि के रूप में तुलसी ख्याति प्राप्त वनस्पति है। तुलसी की दो किस्में पायी जाती हैं–एक वह, जो पूजा–अर्चा में प्रयुक्त होती है। दूसरी वह जिसके बड़े और काले पत्ते होते हैं। फल काले एवं गुच्छेदार होते हैं। इसमें कीटाणु नाशक गुण विशेष है। इसका तेल बनाया और लेप लगाया जाता है। खुजली, दर्द, छाजन, बर्र, बिच्छू आदि के काटे में काम आती है। हल्दी में मिला हुआ उबटन करने से शरीर की दुर्गंध दूर होती है, मुँहासे दूर होते हैं तथा जुएँ मरते हैं। इसकी गंध से मच्छर, खटमल तथा कृमि–कीटक भागते हैं।

पूजा में काम आने वाली तुलसी के अनेक गुण हैं। उससे घर का वातावरण शुद्ध होता है। धार्मिक तथा अध्यात्म भावनाओं को पोषण मिलता है। अनेक रोगों में अनुपान भेद से उसका उपयोग किया जा सकता है। अनुपान का तात्पर्य है, उन पदार्थों का थोड़ा सा सम्मिश्रण जो औषधि का प्रभाव तो बढ़ाते हैं, साथ ही हानि रहित हैं। जैसे बुखार में तुलसी को गिलोय के साथ और खाँसी में पान, अदरक के साथ दिया जा सकता है। इस तरह जिस प्रकार की व्यथा हो, उसी के अनुसार तुलसी के पत्ते, पानी या अन्य अनुपान के साथ पीसकर पिलाए या चटाए जा सकते हैं। वयस्क के लिए दस पत्ते और छोटे बच्चों के लिए पाँच पर्याप्त माने जाते हैं। तुलसी को शत रोग निवारक भी कहते हैं। वह प्राय: हर रोग में प्रयुक्त हो सकती है, अनुपान द्रव्य को मूल औषधि की तुलना में एक तिहाई या चौथाई लेना चाहिए। पीने–चाटने से पूर्व उसे इतना बारीक कर लेना चाहिए कि वह आसानी से गले के नीचे उतारा जाए। कंठ में अड़चन उत्पन्न न करे, दाँतों में उलझे नहीं।

तुलसी ज्वर नाशक तो है ही, शीत प्रधान रोगों में यह विशेष रूप से काम में ली जाती है। संधियों की सूजन में इसे अपामार्ग व निर्गुण्डी के साथ देते हैं। यह कृमिनाशक व वायु नाशक है। तुलसी के बीज का हिम, जीरा, दानेदार शक्कर व दूध के साथ देने पर

मूत्रदाह, मूत्रपिण्ड की पथरी में लाभ होता है। शरीर के सफेद दागों व मुँहासों में तुलसी का रस, नीबू का रस व काली कसौंधी का रस धूप में रखकर गाढ़ा बनाकर चेहरे पर लगाया जाता है। तुलसी के पत्तों का काढ़ा मासिक धर्म के बाद तीन दिन तक नियमित लिया जाए, तो गर्भ नहीं रहता। इस रूप में एक श्रेष्ठ, सिद्ध गर्भ निरोधक है। अतिसार में तुलसी पत्रों का फोण्ट, जायफल का चूर्ण मिलाकर दिया जाता है। अडूसे के रस के साथ तुलसी का स्वरस देने पर पुरानी खाँसी व दमा मिट जाता है। वस्तुतः तुलसी सर्व रोग नाशक संजीवनी बूटी है।

(१२) अजवाइन—इसे छोटी अजमोद भी कहते हैं। १ से ३ फुट ऊँचा इसका पौधा सारे भारत में होता है। फरवरी से अप्रैल के मध्य में फूल तथा बाद में फल पकते हैं, फलों में एक सुगंधित तैलीय द्रव्य होता है, जो अजवाइन का क्वाथ बनाने पर उड़ जाता है। इसी कारण अजवाइन का कभी क्वाथ नहीं बनाया जाता। चूर्ण १ से ३ ग्राम, तैल १ से ३ बूँद, सत्व ३० से १२० मिली ग्राम एवं अर्क २० से ४० मिली लीटर की मात्रा में प्रयुक्त होता है।

अजवाइन कफ—वात शामक एवं पित्त वर्धक है। अजवाइन का लेप या उसके तैल की मालिश सूजन और दर्द वाले विकारों में करते हैं। सत अजवाइनों को गरम जल में मिलाकर घावों को साफ करना, एण्टीसेप्टिक घोल से साफ करने से भी बढ़कर है। पेट में दर्द होने, फूलने की स्थिति में पेट पर उसकी पोटली बनाकर सेंकते हैं। यह मंदाग्नि को प्रदीप्त करती, भूख बढ़ाती, अजीर्ण, अपच एवं उदरशूल मिटाती है। हुकवर्म में सत अजवाइन लाभकारी है। जीर्ण खाँसी एवं श्वांस रोग में इसका चूर्ण देते हैं, एवं धूम्रपान कराते हैं। जमा हुआ बलगम निकलता है, दुर्गन्ध नष्ट होती है। जीवाणु वृद्धि को भी यह रोक कर एण्टीबायोटिक की भूमिका निभाती है। श्वांस का दौरा भी इसके प्रयोग से कम हो जाता है।

कष्ट से होने वाले मासिक धर्म एवं प्रसूति के बाद अजवाइन

को दिए जाने की महत्ता घर–घर में प्रचलित है। यह गर्भाशय का संशोधन करती है तथा ज्वर मिटाती है। गर्भाशय के आस–पास प्रजनन संस्थान में होने वाले रोग (पी०आई०डी०) इसके प्रयोग से नष्ट होते हैं। अफीम की लत जिसे हो, उसे अजवाइन का प्रयोग नियंत्रित मात्रा में कराने पर इसका अभ्यास छूट जाता है। शीत के साथ आने वाले वायरस ज्वरों में अजवाइन का प्रयोग लाभकारी है। अजवाइन मसालेदान का एक महत्त्वपूर्ण घटक है एवं शुद्ध स्थिति में बड़ी गुणकारी औषधि है।

(१३) धनिया–१ से ३ फीट ऊँचा इसका पौधा सारे भारत में पाया जाता है। फूल सफेद या बैगनी होते हैं। फल गोलाकार, पीले–भूरे होते हैं, जो दबाने पर दो भागों में बँट जाते हैं, जिनमें एक–एक बीज होता है। शीत ऋतु के अंत में फूल और फल लगते हैं। इसे धणा या कौथमीर भी कहते हैं। सारे भारत में हरी हालत में चटनी बनाने के काम में व सूखी हालत में मसाले में डालने के काम आता है।

आयुर्वेद मतानुसार यह चरपरा, कसैला, उष्णवीर्य, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला है। पाचक एवं ज्वर नाशक भी है। तीनों दोषों को यह शमन करता है। फलों का चूर्ण ३ से ६ ग्राम, हरे पचांग का हिम २० से४० मिली लीटर, तैल १ से ३ बूँद तक प्रयुक्त होता है।

हरी–धनिया की पत्ती पीसकर सिर दर्द तथा अन्य सूजनों पर इसका लेप करते हैं। मुँह के छालों या गले के रोगों में हरे धनिया के रस से कुल्ला करते हैं। नेत्रों की सूजन व लाली में धनिया को कूटकर पानी में उबाल कर, उस पानी को कपड़े से छानकर आँखों में टपकाने से दर्द कम होता है, लाली मिटती है एवं पानी जाना बंद हो जाता है। पत्तों का स्वरस नाक से नकसीर फूटने पर डालते ही रक्त आना बंद हो जाता है।

धनिया का छिलका उतारकर उसकी मज्जा (मिंगी) को दूध में उबाल कर उस दूध का सेवन मूर्छा या मतिभ्रम में करते हैं। यह

प्यास, अरुचि, वमन, अग्निमन्दता, अजीर्ण एवं उदरशूल को मिटाता है। गर्मी की वजह से पेट में होने वाले दर्द में धनिया के चूर्ण को मिश्री के साथ देते हैं। दस्त लगने पर भुना धनिया पीसकर खिलाते हैं। अगर दस्तों के साथ खून आता है, तो धनिया को पानी में भिगोकर पीस–छानकर पीना चाहिए।

बुखार में देने से, साथ जुड़े कष्ट यथा तृष्णा, वमन, सिर दर्द शांत होते हैं। कामोन्माद को शांत करने के लिए भी धनिया को पानी में भिगोकर दिया जाता है। बच्चों की खाँसी में धनिया को चावल के माड़ में घोंट कर पिलाते हैं। गर्भावस्था की उल्टी में धनिया के काढ़े में मिश्री मिला कर देते हैं। पागलपन, मिर्गी, हिस्टीरिया, उन्माद को यह जल्दी ही शांत कर देता है।

(१४) टमाटर–टमाटर का आम उपयोग शाकों में होता है। इसमें खटाई की मात्रा अधिक रहती है। इसलिए आम, इमली आदि के स्थान पर उसे काम में लाया जाना सस्ता भी पड़ता है और सुलभ भी। उसमें नीबू से मिलते–जुलते गुण पाए जाते हैं। नारंगी का मज्जा भी उसमें मिल सकता है।

टमाटर पाचक है, स्वादिष्ट तो है ही। पेट के रोगों में उसका उपयोग भली प्रकार किया जा सकता है। जी मिचलाना, डकारें आना, पेट फूलना, मुँह के छाले, मसूढ़ों के दर्द जैसे रोगों में टमाटर का सूप बनाकर दिया जा सकता है, उसमें अदरक, काला नमक आदि भी मिला लिया जाए, तो यह स्वादिष्ट भी बन जाता है और गुणकारी भी। चाय, काफी के स्थान पर यदि एक–एक या आधा–आधा कप कई बार दिन में लिया जाए, तो उससे स्फूर्ति भी मिलती है और पेट की सफाई होती है।

टमाटर की कई किस्में हैं, उसमें से कोई न कोई हर महीने उगाई जा सकती है। गुणों की दृष्टि से वे लगभग समान हैं। टमाटर की चटनी शाक का काम भी देती है और उदर रोगों में उपचार का भी।

टमाटर का सेवन शरीर की स्थूलता, उदर रोग, अतिसार अपेण्डिसाइटिस में बड़ा लाभकारी पाया गया है। टमाटर में लोहे का परिमाण अन्य वनस्पतियों–फलों की तुलना में अधिक है। यह रक्ताल्पता की एक अच्छी औषधि है। इसके विटामिन साधारण अग्नि से नष्ट नहीं होते। बेरी–बेरी, गठिया व एक्जिमा में इसका सेवन लाभप्रद है। ज्वर के बाद की कमजोरी को यह मिटाता एवं मधुमेह के रोग के लिए सर्वश्रेष्ठ पथ्य है।

(१५) लहसुन–लहसुन प्याज की बिरादरी का है, पर उससे कहीं अधिक तीक्ष्ण एवं गरम है। इसकी मात्रा थोड़ी ही ली जाती है। गंध भी उससे तीव्र होती है। यह उत्तेजक है। चाय काफी की तरह लहसुन खाने से भी उत्तेजना आती है। उससे नपुंसकता जैसे रोग दूर होते हैं। गले में घेंघा फूल जाने की स्थिति में लहसुन का उपयोग लाभदायक सिद्ध होता है।

लहसुन कच्चा नहीं खाया जाता। उसे किसी खाद्य पदार्थ में मिलाकर खाते हैं, ताकि गंध एवं तीक्ष्णता हल्की पड़ जाए। लहसुन को मेवा एवं मावा मिलाकर उसकी कतली व लड्डू भी बनाए जाते हैं। उनका सेवन जाड़े के दिनों में उत्तम है। गर्मी के दिनों में अधिक लहसुन खाने से जलन होने लगती है। प्यास की बढ़ोत्तरी हो जाती है। आमाशय की झिल्ली कड़ी होने एवं अल्सर में लहसुन का उपयोग अच्छा है। दाँत का दर्द मसूढ़े फूलने पर लहसुन को पीसकर उसकी धीरे–धीरे मालिस करनी चाहिए।

लहसुन को तिल्ली के तेल में पकावें। एक पाव तेल में आधी छटांक लहसुन पीसकर धीमी आग पर पकने दें। लहसुन जब काला पड़ जाए, तो उसे छान लें। यह लहसुन का तेल तैयार हो गया। कान के दर्द में इसकी कुछ बूँदें डालकर रुई से बंद कर देना चाहिए। इस प्रकार कई दिन प्रयोग करने से कान में फुंसी भी उठी हो तो, वह साफ हो जाती है। जमा हुआ मैल भी फूलकर निकल जाता है, और उसे सलाई के सहारे बाहर निकाल देने से कान साफ हो जाता है।

बहरापन बढ़ रहा हो, तो उसमें भी इसके प्रयोग से लाभ होता है।

जोड़ों के, रीढ़ के दर्द में लहसुन के तेल की मालिस की जा सकती है। चमड़ी में पंजा गड़ाकर बैठने वाली छोटे किस्म की जुएँ भी इसकी मालिस से मर जाती हैं। उठते हुए फोड़ों पर लहसुन की पुल्टिस बाँधने से वह जल्दी पक कर फूट जाता है या बैठ जाता है। हैजा में पीने के लिए लहसुन के साथ उबला पानी देने से आराम होता है।

मुख मार्ग से देने से श्वांस व डकार में दुर्गन्ध आने के कारण इसका बाह्य प्रयोग ही बहुधा अपने उपचार में मान्यता प्राप्त है।

लहसुन को पीसकर छाती पर लेप करने से, फेफड़ों की पुरानी बीमारी–राजयक्ष्मा में कफ जल्दी निकलता है। सभी प्रकार के घावों, सूजन आदि के लिए यह एक श्रेष्ठ एण्टीसेप्टिक है। सारे वात रोग, संधि शोथों में उसके तेल की मालिस करते हैं। खुजली में लहसुन की कली को पीसकर राई के तेल में गरम कर उस तेल से मालिस करते हैं। बाह्य प्रयोग में यह ध्यान रखना चाहिए कि यह एक बहुत ही तीव्र जलन करने वाली चर्मदाह औषधि है। अधिक समय तक लेप करने पर छाला उठ सकता है। अंतरंग प्रयोग में इसका हृदय रोगों में (कोरोनरी नलिकाओं में रक्तावरोध) एवं कोलेस्ट्राल को घटाने हेतु, फेफड़ों के क्षय एब्सेस आदि में प्रयोग तो अब वैज्ञानिक दृष्टि से प्रमाणित है एवं उसके तेल की 'गार्लिक पर्ल्स' भी बाजार में उपलब्ध है। इसकी तीक्ष्ण गंध, तामसिक वृत्ति एवं उत्तेजक गुण वाला होने के कारण, जहाँ इसके सेवन को उचित न समझा जाए, वहाँ बाह्य प्रयोग तो किया ही जा सकता है।

(१६) ग्वारपाठा (घृतकुमारी)–तुलसी, गिलोय की तरह यद्यपि ग्वारपाठा, जिसे घी कुंवार भी कहते हैं, मसाला तो नहीं है, पर आँगनवाड़ी लगाते समय उसे भी लगा देना चाहिए। अपने ढंग की घरेलू दवा तो है ही। उसकी प्रकृति गर्म मानी जाती है एवं शक्तिवर्धक भी। सामान्य उपयोग में इसका गूदा ही आता है, जो

छिलके के साथ मजबूती से चिपका रहता है। उसे चाकू से ही अलग करना पड़ता है।

घी–तेल में तलकर मसाले डालकर उसे शाक की तरह भी खाया जा सकता है और घी आटे में मिलाकर लड्डू, कतली भी बना सकते हैं। उसे आहार की तरह सीमित मात्रा में प्रयोग किया जा सकता है। प्रसव के उपरांत जननी को भी पेट की सफाई के लिए खिलाया जाता है। पेट के रोगों में विशेष रूप से काम में आता है। उसकी पुल्टिस दुखने वाले स्थानों पर बाँधी जाती है। पेट दर्द, सिर दर्द आदि में उसकी लुगदी बाँध देने से लाभ होता है।

फेंफड़ों की सूजन, श्वांस रोग, तिल्ली, जिगर तथा गुर्दे की बीमारियों में इसका उपयोग लाभकारी है। घी कुंवार के रस को सुखाकर एक पदार्थ बनाया जाता है, जिसे एलुआ या मुसंबर कहते हैं। वह नरम व पारदर्शी होता है। यह मज्जावर्धक, कामोत्तेजना देने वाला, कृमि नाशक एवं विष निवारक माना गया है। सारे शरीर के मल शोधन हेतु घीकुंवार एक श्रेष्ठ औषधि है। जठराग्नि को यह प्रदीप्त करता है एवं हर प्रकार की खाँसी, लीवर के रोगों में आराम पहुँचाता है। यह चर्म रोगों में भी आराम पहुँचाता है। चर्म रोगों में यह रक्तशोधक की भूमिका निभाता है। पेट में इसकी प्रधान क्रिया बड़ी आँत एवं उत्तर गुदा (एनौरेक्टल जंक्शन) पर होती है। घी कुंवार का गूदा ६ माशा मिलाकर खाने से वायु गोले से हुआ पेट दर्द मिट जाता है। रक्त प्रदर, श्वेत प्रदर एवं हर प्रकार के प्रजनन अंगों की बीमारी में प्रयोग लाभकारी है। रजोरोध होने पर मासिक धर्म के समय से एक सप्ताह पूर्व से इसका सेवन आरंभ कर देना चाहिए।

पत्र का स्वरस मात्रा में १९ से २० मिली लीटर (२ से ४ छोटे चम्मच) एवं एलुआ चूर्ण १/२ ग्राम तक की मात्रा में देते हैं। अधिक मात्रा में देने पर मरोड़ के साथ दस्त आने लगते हैं। अतः मात्रा का ध्यान हर स्थिति में रखा जाना चाहिए, विशेष रूप से सूखे एलुआ चूर्ण के संबंध में।

(१७) **प्याज**–यह आहार एवं शाक भाजी के रूप में प्रयुक्त होता है। इसकी तामसिक प्रवृत्ति उष्णवीर्य एवं तीक्ष्ण गुण होने के कारण कई वर्ग इसके सेवन का निषेध करते हैं, केवल बाह्योपचार में प्रयुक्त करते हैं।

आयुर्वेदिक मतानुसार प्याज बलकारक, कफ–पित्त नाशक, वमन दोष हरने वाली औषधि है। कफ निकालने के लिए यह एक उत्तम औषधि है। आँतों की क्रिया शक्ति को बढ़ाकर दस्त साफ लाने में एवं बवासीर में इसका प्रयोग किया जाता है। यह ऋतु स्राव में नियमितता लाता है। बोकांइटिस, लीवर के विभिन्न रोगों एवं कष्टयुक्त मासिक धर्म में इसका प्रयोग होता है।

बाह्योपचार में वेदना निवारक एवं शोथ मिटाने वाला गुण होने के कारण इसे संधियों की सूजन एवं व्रण शोथ में चटनी रूप में गरम करके बाँधते हैं। प्याज का रस व तेल मिलाकर मलने से गठिया रोग की पीड़ा कम होती है।

दाद और खुजली में इसके रस का लेप किया जाता है। नाक से नकसीर फूटने पर प्याज का रस टपकाते हैं। कान के दर्द, फुन्सी में प्याज के बीच का भाग गरम कर रखते हैं अथवा ताजे प्याज का रस गरम करके कान में टपकाते हैं। लू में ताजे रस का सेवन तथा लेप सारे शरीर में करते हैं। प्याज का रस आँखों में लगाने से नेत्रों की पीड़ा मिटती है एवं मसूड़ों पर लगाने से सूजन कम होती है। हल्दी के साथ पुल्टिस बनाकर लहसुन की तरह यह भी फोड़े पकाने व मुंदी चोटों की पीड़ा कम करने हेतु प्रयुक्त होता है। मधुमेह के कारबन्कल एवं गिल्टियों में यह प्रयुक्त होता है। इसके रस को मसल कर लगाने पर बिच्छू के विष की पीड़ा कम होती है।

(१८) **आँवला**–आँवला पेड़ वर्ग में गिना जाता है, पर उसके फल पौष्टिक और शोधक माने जाते हैं। रक्तविकार में काम आते हैं। सुखाकर रख लेने पर भी उसमें विटामिन ''सी'' पर्याप्त मात्रा में बना रहता है। यह नेत्र ज्योति बढ़ाने, मस्तिष्क मज्जा को बल देने में विशेष

रूप से उपयोगी सिद्ध होता है। आँवले का चूर्ण बारीक पीसकर एक तोला पानी में भिगो दिया जाए, एवं प्रातः काल उसे छानकर उस पानी से सिर धोया जाए, तो बालों की जड़ें मजबूत होती हैं। जमी हुई रूसी झड़कर अच्छी तरह साफ हो जाती हैं।

नीबू की तरह आँवले की खटाई भी स्वादिष्ट तथा गुणकारी है। उसमें आम, इमली जैसी खटाइयों से होने वाली विकृतियाँ उत्पन्न नहीं होतीं। भूने या उबले आँवले का पानी बनाकर लू लगने की स्थिति में लिया जा सकता है।

आँवला आमाशय की अम्लता को कम करता है, अतः अम्लपित्त (पैप्टिक अल्सर), १/२ से १ चम्मच चूर्ण की मात्रा में एण्टेसिड की तरह बड़ी सफलता से प्रयुक्त होता है। अनुपान जल होता है। मधु के साथ सबेरे–शाम देने पर बवासीर में भी लाभ पहुँचता है। यह एक श्रेष्ठ रसायन है, जिसका कायाकल्प में प्रयोग होता है। यह त्रिफला (आँवला, बहेड़ा, हरड़) का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो विरेचक के रूप में व आँखों के दोष मिटाने हेतु एवं रसायन रूप में प्रयुक्त होता है।

अन्य औषधि मसाले–कुछ मसाले ऐसे हैं, जिन्हें न घर में अपनी शाक वाटिका में उगाया जा सकता है, न ही किसी अन्य विधि से बनाया ही जा सकता है। इनमें औषधीय प्रयोजन की दृष्टि से, घरेलू नुस्खों के रूप में प्रयुक्त होने वाले तीन मुख्य हैं–सुहागा, हींग, काला नमक। ये केमिकल समूह में आते हैं। तीन औषधियाँ जो विशिष्ट जलवायु में ही पैदा होती हैं, बड़े व्यापक पैमाने पर जिनका प्रयोग मसालों के रूप में होता है, बड़े सुगम रूप में मसाला उपचार में प्रयुक्त की जा सकती हैं– ये हैं लौंग, तेजपत्रक, दालचीनी। इनका भी वर्णन किया जा रहा है, ताकि सर्वोपलब्ध इन मसालों से घरेलू उपचार का सिलसिला चल सके।

(१९) सुहागा–एक प्रकार का खनिज द्रव्य है एवं इसे टंकन बार भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसे बोरेक्स नाम दिया गया है। यह

सफेद रंग का गंध रहित रवेदार पदार्थ होता है, जिसे शोधन के बाद प्रयोग में लाया जाता है। शास्त्रोक्त पद्धति (शालिग्रामनिघंटु) तो बड़ी पेचीदगियों से भरी है, पर सबसे सरल विधि अंगारे पर रखकर फूला पाड़ने की है। फिर यह शोधित सुहागा एक रोगनाशक दवा बन जाता है। इसका स्वाद नमकीन खारा होता है। आयुर्वेदिक मत से सुहागा अग्निवर्धक, खाँसी एवं श्वांस रोग को दूर करने वाला, ज्वर एवं पेट के दर्द को दूर करने वाला है। यह कृमि नाशक एवं विष नाशक है। मूत्र मार्ग से बाहर निकलते समय पानी व उत्सर्जित यूरिया पदार्थ की मात्रा बढ़ाता है। मूत्र की अम्लता इससे कम होती है। पेट में यह तुरंत घुल जाता है एवं थोड़ी मात्रा लेने से हर प्रकार के कृमियों को निकाल बाहर करता है। गर्भाशय की संकुचन क्रिया को व मासिक धर्म परिमाण को भी यह बढ़ाता है।

विभिन्न रोगों में इसे प्रयोग करने की विधि इस प्रकार है–

(क) मुँह के छालों में सुहागा के पानी से कुल्ला करने से वे तुरंत मिटते हैं। पाँच रत्ती से लेकर एक माशा सुहागा आधे गिलास जल में मिलाकर प्रयुक्त होता है। जल औटाकर कुल्ला कराया जाए, तो मुख व गले के मार्ग की सूजन मिट जाती है। काली मिर्च पीसकर साथ में लगाने पर मसूड़े के घाव तुरंत भर जाते हैं।

(ख) मंदाग्नि भूख न लगने की स्थिति में १/२ माशा फूला सुहागा एक कप गुन–गुने जल में दिन में दो या तीन बार देते हैं।

(ग) त्वचा की खुजली पर सुहागे का पानी लगाया जाता है। नीबू के रस में मिलाकर लगाने पर एक्जिमा को समाप्त करता है।

(घ) बच्चों की खाँसी में फुलाया सुहागा २–३ रत्ती की मात्रा में शहद या दूध के साथ देते हैं।

(च) मासिक धर्म की रुकावट, गर्भाशय की सूजन व दर्द में, सुहागे को एक माशे की मात्रा में जल के साथ मिलाकर देने से रुकावट मिटती व रक्त स्राव खुलकर होता है।

(छ) अण्डकोष के सूजन में दो रत्ती फूला सुहागा गुड़ के साथ

प्रातःकाल लेने पर तीन–चार दिन में आराम पहुँचता है।

(ज) सर्पदंश या किसी भी प्रकार के स्थावर विषजन्य विकार की शांति हेतु सुहागा मिश्रित जल देते हैं अथवा डेढ़ तोला सुहागा घी में मिलाकर पिलाते हैं।

(झ) लगभग तीन तोला फूला सुहागा चार तोले शहद में मिलाकर प्रतिदिन लेने से दमा रोग मिटता है।

(ञ) मुँह पर मुँहासों–झांई को मिटाने के लिए सुहागे को चंदन के साथ पीसकर लेप लगाते हैं।

(२०) हींग–वस्तुतः एक वृक्ष का दूध है, जो जमकर गोंद की शक्ल ले लेता है। भारत में यह ईरान से आती है। इसे उग्रगंधा या सहस्र वेधी भी कहते हैं।

काली भूरी तीखी गंध वाली हींग सर्वश्रेष्ठ मानी गई है। यह छौंक आदि में भोजन में बड़े व्यापक स्तर पर प्रयोग की जाती है।

आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार हींग पेट की अग्नि को बढ़ाने वाली, आमाशय व आँतों के लिए उत्तेजक, पित्तवर्धक, मल बाँधने वाली, खाँसी, कफ, अफारा मिटाने वाली एवं हृदय से संबंधित छाती के दर्द व पेट के दर्द को मिटाने वाली एक परीक्षित औषधि है। इसे अजीर्ण एवं कृमि रोगों में भी प्रयोग करते हैं। लीवर को यह शक्ति देती है एवं मस्तिष्कीय विकारों में भी इसका प्रभाव देखा गया है। हींग को देने से श्वांस नलिका में जमा कफ पतला होकर निकल जाता है। हींग को शुद्ध करके लिया जाता है। लोहे के पात्र में घी डालकर गर्म करते हैं। लाल होने पर उतार देते हैं। पेट का फूलना, दर्द, अपच एवं कृमि रोग में हींग २ से ६ रत्ती तक की मात्रा में अजवाइन व घीकुँवार के गूदे के साथ देते हैं। आँतों में अल्सर होने पर इसके पानी का एनीमा भी दिया जाता है।

मलेरिया ज्वर में हींग व कपूर की मिली हुई बटी दी जाती हैं। एक तोला हींग व एक तोला कपूर, इन दोनों को शहद में घोंट कर रत्ती–रत्ती भर की गोलियाँ बनाकर दी जानी चाहिए। ज्वर के साथ

सन्निपात की स्थिति होने पर हींग, कपूर व अदरक का रस मिलाकर जीभ पर लगा देने भर से आराम होने लगता है। छाती की धड़कन, हृदय शूल, घबराहट में एक रत्ती मात्रा में ली गई हींग तत्काल लाभ देती है। हिस्टीरिया में इसे मस्तिष्क–उत्तेजक होने के नाते और स्नायु–तंतुओं को बल पहुँचाने वाले गुण के कारण दिया जाता है, जो निश्चित ही लाभ पहुँचाता है। काला नमक, अजवाइन व स्याहजीरा आदि के साथ यह सभी उदर रोगों में हिंग्वाष्टक चूर्ण के रूप में प्रयुक्त होती है। सर्पदंश में बताया जाता है कि हींग को नारियल के दूध में डुबाकर काटे हुए स्थान पर लगाया जाता है। निमोनिया, ब्राँकाइटिस, हूपिंग कफ (कुकर खाँसी) में १ से ४ रत्ती की मात्रा में दी गई शोधित हींग बड़ी लाभकारी है। पेट के कृमियों के लिए भी इसका नियमित सेवन लाभप्रद है।

(२१) काला नमक–सर्वोपलब्ध मसाले का एक महत्त्वपूर्ण अंग, यह लवण सांभर नमक के साथ आँवला, सुहागा, पियावाँसा के पत्तों के सम्मिश्रण से बनाने के बाद उपलब्ध होता है। बाजार में यह सेंधा नमक की तरह ढेलों में मिलता है।

काला नमक हिंग्वाष्टक चूर्ण का एक घटक है। यह हाजमें की शक्ति को बढ़ाता है, वायु मिटाता है, तथा पेट के फुलाव को दूर कर दस्त लाता है। भोजन के प्रति अरुचि, पेट में कृमि तथा उदर शूल में यह लाभकारी है। यह हृदय उत्तेजक है एवं हृदय रोगजन्य शूल में लाभप्रद पाया गया है। सुलेमानी नमक एवं वज्रक्षार के रूप में सम्मिश्रण से तैयार किए गए इसके चूर्ण आयुर्वेदिक नुस्खों में बहुधा प्रयुक्त होते हैं।

घृतकुमारी, अजवाइन या हींग के साथ इसे उदर रोगों में लिया जाता है। वायु प्रधान रोगों में गरम जल के साथ एवं पित्त प्रधान रोगों में इसे घी के साथ देते हैं। रक्त विकार, सूजन, जलोदर, हृदय या लीवर जन्य शोथ में इसका प्रयोग किसी भी स्थिति में नहीं किया जाना चाहिए।

गरम मसाले–विशिष्ट समशीतोष्ण जलवायु में पैदा होने वाली वाली कुछ औषधियाँ ऐसी हैं, जिन्हें घर–आँगन में उगाया तो नहीं जा सकता, पर सूखे रूप में वे औषधि की दृष्टि से एवं मसालों के रूप में सर्वोपलब्ध है। लौंग, तेजपत्रक एवं दालचीनी की गणना इनमें प्रमुख रूप से की जाती है।

(२२) लौंग–अपने देश में जंजीबार से आती है। कुछ वर्षों से दक्षिण भारत के समुद्री किनारों में सफलता मिली है। लौंग वृक्ष सुगंधित होते हैं एवं इनके फलों की कलियों को ही लौंग कहा जाता है। वे ही लौंग लाभकारी होते हैं, जिनमें से तेल न निकाला गया हो।

लौंग चरपरी,अग्निप्रदीपक, रुचि बढ़ाने वाली तथा कफ पित्त शामक है। खाँसी, श्वांस, शूल एवं क्षय रोगों में प्रयुक्त होती है और तृषा तथा वमन को दूर करती है। लौंग को दाँतों के दर्द में दंतक्षय व केवीटीज में प्रयुक्त किया जाता है, यह सभी जानते हैं। पाचन क्रिया पर इसका सीधा प्रभाव पड़ता है। भूख बढ़ती है एवं पाचक रसों का स्राव बढ़ता है। पेट के कृमि इसके प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं एवं कब्जियत मिटती है। इसकी प्रयोज्य मात्रा एक से दो तक की है। इसे पीसकर मिश्री की चासनी या शहद के साथ देते हैं।

लौंग का सबसे बड़ा गुण है–रक्त श्वेत कणों को बढ़ाना व जीवनी शक्ति के लिए उत्तरदायी कोषों का पोषण करना। इसी विशेष गुण के कारण इसे क्षय रोग एवं ज्वर आदि में एण्टीबायोटिक की तरह प्रयुक्त किया जाता है। वायु नलिकाओं को फैलाकर श्वांस–अवरोध को मिटाने वाले कफ निस्तारक गुण के कारण यह दमा रोग में बड़ी लाभकारी है। यह रक्त शोधक एवं मूत्रल है। फोड़े–फुन्सियों या त्वचा की सूजन में इसका चंदन के साथ लेप करने से वेदना मिटती है एवं व्रण जल्दी जल्दी भरता है। लौंग, चिरायता समान भाग पानी में पीसकर शहद के साथ पिलाने से ज्वर उतर जाता है। लौंग को जल में पीसकर गर्म करके ललाट व कनपटियों

पर लेप करने से स्नायु जन्य सिर दर्द व तनाव मिटाता है। श्वांस की दुर्गन्ध इससे मिटती है। खाँसी में लौंग को ठण्डे पानी में पीसकर, छानकर, मिश्री मिलाकर एवं आग पर भूनकर शहद में मिलाकर चाटते हैं। वस्तुतः लौंग बड़ी गुणकारी औषधि है, उसे सीमित मात्रा में निर्धारित अनुपान के साथ प्रयुक्त किया जाए।

(२३) **तेजपत्रक**–इसे तेजपात भी कहते हैं। हमारे यहाँ यह हिमालय में ३ से ८ हजार फीट की ऊँचाई तक पाया जाता है। इसके २० से ३० फीट ऊँचे वृक्ष होते हैं, जिनके हर अंग से सुगंध आती है। इसके पत्ते मसालों के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इसकी मात्रा पत्र चूर्ण चार माशा की है।

तेजपात कफ रोगों के लिए बड़ी उपयोगी वस्तु है। गरम व खुश्क, यह औषधि पिप्पली चूर्ण की एक ग्राम मात्रा में शहद के साथ लेने पर खाँसी व जुकाम को मिटाती है। अदरक के रस के साथ अथवा अदरक के मुरब्बे की चासनी के साथ इसके पत्तों का चूर्ण लेने पर दमे का प्रकोप मिटता है।

पेट के वायु विकारों में, दस्त अधिक लगने की स्थिति में, अजीर्ण में इसका काढ़ा पिलाते हैं। मधुमेह में भी इसे उपयोगी पाया गया है। प्रसूति के पश्चात् इसका चूर्ण या काढ़ा देने से अधिक रक्तस्राव एवं सेप्टिक होने के अवसर कम होते हैं। मासिक धर्म की अनियमितता इसके प्रयोग से दूर होती है। मुख की दुर्गन्ध इसके प्रयोग से दूर होती है एवं मसूढ़ों पर मलने से दाँत मजबूत होते हैं। तेजपात के मसालों में प्रयुक्त होने का मूल कारण ही इसका वात, पित्त, कफ नाशक गुण है। साथ ही यह पाचन क्रिया को भी सुव्यवस्थित करता है। इसका नियमित सेवन हर दृष्टि से लाभदायक है।

(२४) **दालचीनी**–इसे दारुसिता अथवा तज भी कहा जाता है। इसके पत्तों में एक अन्य वृक्ष की मिलावट अक्सर हो जाती है। महाराष्ट्र व गुजरात में इसे तज नाम से ही जाना जाता है। यह हिमालय क्षेत्र अथवा समुद्री किनारों पर मलेशिया एवं लंका में पैदा

होता है। तेजपात की छाल भी दालचीनी में कभी–कभी मिला दी जाती है। छाल कड़वी, चरपरी पर सुगंधित होती है। चूर्ण की मात्रा ३ से ६ माशे तक एवं तेल की मात्रा ५ बूँद तक प्रयुक्त होती है।

दालचीनी वात, पित्त शामक है। इस गुण के कारण इसे मंदाग्नि में आमाशय को उत्तेजना देने के लिए, पेट की वायु को निकालने के लिए, मरोड़ एवं वमन बंद करने के लिए, अतिसार एवं कृमि रोग में बड़ी सफलता से प्रयुक्त किया जाता है। क्षय रोग के कारण बलगम में खून आना इसके प्रयोग से रुक जाता है। गर्भाशय की शिथिलता में इसका प्रयोग लाभकारी है। दालचीनी मूलतः रक्त शोधक है।

अतिसार में दालचीनी की छाल में ४ से १ के अनुपात में कत्था मिलाकर इस सम्मिश्रण का काढ़ा पिलाने से दस्त बंद हो जाते हैं। सोंठ व इलायची को समभाग में इसके साथ ५ रत्ती देने पर कब्ज मिटता व भूख बढ़ती है। सोंठ के साथ सर्दी–जुकाम में इसका काढ़ा देते हैं। बहुत अधिक दिनों की खाँसी में दालचीनी, सौंफ, मुलहठी व मुनक्का इन सबको मिलाकर गोली बनाकर लेने से शीघ्र ही आराम मिलता है। इसका तेल सिर दर्द में आराम पहुँचाता है। दाँत के दर्द में इसके तेल का फाया बनाकर लगाने से आराम होता है। गर्भवती स्त्रियों को इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

दालचीनी मसालों में एक सर्वश्रेष्ठ औषधि है, जीवनी शक्तिवर्धक है एवं नियमित रूप से लेने पर रक्त शोधन करती है। वायरस जन्य रोगों का आक्रमण इसके प्रयोग से नहीं हो पाता।

मसाला वाटिका में प्रयुक्त होने वाली उपर्युक्त सभी औषधियों को जब चिकित्सा प्रयोजन हेतु प्रयुक्त किया जाए, तो हमेशा स्थानीय वैद्य गणों से मात्रा के संबंध में परामर्श कर लिया जाए। मात्रा की न्यूनाधिकता इन मसालों से शरीर में कोई भी विकृति पैदा कर सकती है। अतः स्वयं चिकित्सा के दर्प में, उपचार में कभी जल्दबाजी नहीं करना चाहिए। प्रस्तुत पुस्तक में जहाँ भी विभिन्न रोगों की चिकित्सा का जिक्र आया है, वहाँ रोग का सही निदान भी एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा